ISSN 2395-051X

स्वतंत्रता के 75 वर्ष : सुशासन और विकास

डॉ. भावना यादव

सहायक प्राध्यापक-राजनीति विज्ञान

शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

सारांश -

स्वतंत्रता उपरांत नित नवीन परिवर्तनों के युग में आज मनुष्य मशीनों से संचालित हो रहा है समाज में उपभोगवादी दृष्टिकोण अपने चरम पर है जिसके प्रभावस्वरूप नेतृत्व भ्रष्टाचारी हुआ है तो समाज भी नैतिक पतन के दौर से गुजरा है इन सबका प्रभाव विकास पर पड़ा और सुशासन के रूप में प्रशासन में सुधार का दौर प्रारंभ हुआ। जिसके परिणामस्वरूप शासन प्रशासन में मानवीय तत्वों के समावेश ने देश के विकास को पुनः गति देने का कार्य किया है।

मुख्य शब्द - स्वतंत्रता, सुशासन, लोकप्रशासन, सरकार, विकास।

''हमारा समाज क्रांतियों की तुलना में पुनर्जागरण के प्रति अधिक गृहणशील है। पुनर्जागरण और क्रांति में फर्क होता है। क्रांति आंधी की तरह है, पुनर्जागरण ताजी हवा में झोंके की तरह।''[1] यह पुनर्जागरण स्वतंत्रता के पूर्व और पाश्चात्य भारतीय परिदृश्य का अभिन्न हिस्सा रहा है। स्वतंत्रता के पाश्चात्य देश ने स्वयं को स्थिरता प्रदान करने तथा विभिन्न क्षेत्रों में विकास के साधन के रूप में संसदीय शासन प्रणाली के एक अंग के रूप में लोक प्रशासन को माध्यम बनाया। लोक प्रशासन ने जहां विकास का मार्ग प्रशस्त किया वहीं समय के साथ आंतरिक और बाह्य समस्याओं से स्वयं भी ग्रसित हुआ। जिसका सीधा प्रभाव विकास की गति पर पड़ा और प्रशासन में सुश्रेष्ठ प्रशासन के विचार को पुनः अपनाने पर जोर दिया जाने लगा।

प्राचीनकाल से प्रचलित 'रामराज्य' व स्वराज्य की परम्परागत अवधारणा का नया नाम सुशासन है। वास्तव में श्रीमद्भागवद गीता, यजुर्वेद, मनुस्मृति तथा चाणक्य के अर्थशास्त्र से लेकर वर्तमान आधुनिक लोककल्याणकारी राज्य की स्थापना तक सुशासन महत्वपूर्ण विचार रहा है।'' प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन भी सुशासन के विचार से प्रेरित रहा। भारत में जातक कथायें, महाभारत का शांति पर्व अनुष्ठान पर्व, शुक्राचार्य का नीतिसार, पाणिनि की अष्टाध्यायी, ऐतरेय ब्राह्मण, वाल्मीकि, रामायण, कौटिल्य का अर्थशास्त्र इसके उदाहरण है। ..... कौटिल्य के शब्दों में प्रजा के सुख में राजा का सुख है, प्रजा के हित में राजा का हित है। राजा के लिये प्रजा के सुख से भिन्न अपना सुख नहीं है, प्रजा के सुख में ही उसका सुख है।''[2]

इस प्रकार सुशासन भारत में प्राचीन समय में चली आ रही लोककल्याणकारी विचारधारा का ही अंग है। जिसका सामान्य अर्थ है अधिकतम लोगों का अधिकतम हित अर्थात् सुखी राज्य, सद्शासन, या सुशासन।

सुशासन का अर्थ 'सामान्य हित' में समाहित है। जिसमें ''सामान्य शब्द का आशय समुदाय द्वारा प्रयोजनों अथवा मूल्यों को सामूहिक रूप से स्वीकार करना है न कि विशेष या व्यक्तिगत विचारों को। इस प्रकार जब 'सामान्य' और 'हित' शब्द मिल जाते हैं तब उसके अनेक अर्थ हो जाते हैं जैसे समस्त लोगों का हित, अधिकतम लोगों का अधिकार हित, सर्वहित, अथवा सार्वजनिक हित। ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन राज्य में सामान्य हित संपूर्ण और सबके लिए था परंतु वर्तमान पश्चिमी सोच में, सामान्य हित शब्द अपवाद स्वरूप ही विश्व व्यापकता को सम्मिलित करते हैं।''[3] यहाँ इस पर ध्यान देना होगा कि ''सामान्य हित, व्यक्तिगत हित से व्यापक है वहां सामान्य हित और लोकहित से भी व्यापक है। लोक हित में समस्त व्यक्तियों का हित सम्मिलित न होकर अधिकांश व्यक्तियों का हित सम्मिलित होता है। सामान्य हित सर्व कल्याणकारी होता है।''[4]

सुशासन का अर्थ समस्त जनता के हित के लिये कार्य करना है। वर्तमान में सुशासन की इस अवधारणा को प्रभावी प्रशासन के रूप में सरकार द्वारा अपनाया गया है। यहां हमें याद रखना होगा कि शासन और सरकार समनार्थक नहीं हैं बल्कि सरकार की अपेक्षा शासन अधिक व्यापक होता है ''सरकार का अर्थ एक मशीनरी और संस्थाओं की व्यवस्था में लिया जाता है जिसके द्वारा प्रभुसत्ता के उपभोग से राजनीतिक समुदाय के आतंरिक एवं बाह्य हितों को पूर्ण करना है, जबकि शासन का अर्थ एक प्रक्रिया तथा परिणाम से है जिसमें समाज के हित के लिये साधिकार निर्णय लेना होता है। शासन सरकार से व्यापक अवधारणा है। यह प्रथम अर्थ में सरकार, उसकी संस्था और अनौपचारिक तथा गैर सरकारी संस्थाओं से संबंधित है, वहीं दूसरे अर्थ में यह अंतर्राष्ट्रीय सहायता शर्तों एवं विधि के शासन, मानवाधिकार, भागीदारी विकास और लोकतंत्र जैसे अवधारणात्मक समुच्चयों से भी संबंध रखता हैं शासन मानव सभ्यता का अभिन्न हिस्सा है। यह निर्णय निर्माण की प्रक्रिया है जिसके माध्यम से मानव सभ्यता निरंतर अपने निर्धारित भावी लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयत्न करती रही है। शासन नीति निर्माण और नीति कार्यान्वयन दोनों से ही संबंधित है।''[5]

इसी प्रकार शासन और सुशासन में भी भेद होता है जहां शासन एक मूल्यहीन प्रबंध करने की प्रक्रिया है वहीं सुशासन में मूल्यों को धारण किया जाता है। इस परिप्रेक्ष्य में हेडन के अनुसार ''शासन का अध्ययन ऐसी शर्तों के पहचान को शामिल करता है जो ठोस प्रबंधन मुहैया कराने के साथ समस्या समाधान के लिये प्रभावी रणनीति उपलब्ध कराता है सुशासन, सूचना की स्वतंत्रता, एक मजबूत वैधानिक व्यवस्था और सक्षम प्रशासन की मांग करता है जिसके पीछे राजनैतिक पार्टियों की राजनीतिक लामबंदी हो। सुशासन का अर्थ मात्र सक्षम और मजबूत प्रशासन से कहीं अधिक गहरे अर्थों वाला है। यह एक प्रभावी लोकोन्मुख प्रशासनिक तंत्र के माध्यम से समाज व राज्य के बीच स्थायी सेतु निर्माण की प्रक्रिया है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो 1995 के सामाजिक विकास सम्मेलन में घोपित वर्तमान मानव समाज के तीन महान लक्ष्यों को रेखांकित करती है - (अ) गरीबी उन्मूलन, (ब) उत्पादक रोजगार सृजन और (स) सामाजिक एकीकरण।''[6]

सुशासन का अर्थ स्पष्ट करने हेतु विचारकों ने इसे परिभाषित किया है। यथा ''प्लेटो के अनुसार सुशासन का अर्थ है न्याय पर आधारित शासन और महाभारत के शांतिपर्व में लिखा है कि सुशासन की नींव है धर्मनिष्ठ शासन। अलेक्जेण्डर पोप के अनुसार वही सरकार अच्छी है जिसका प्रशासन अच्छा हो। व्यक्तिवादी

ISSN 2395-031X

विचारक फ्रीमेन के अनुसार वही सरकार अच्छी है जो कम से कम शासन करे। महात्मा गाँधी ने रामराज्य की कल्पना की थी।''[7] ''सरल शब्दों में सुशासन का मतलब है देश से संबंधित मामलों का सभी राज्यों पर प्रभावशाली प्रबंधन भौगोलिक अखंडता की गारंटी तथा इसके सभी नागरिकों के समग्र कल्याण व सुरक्षा का सुनिश्चितीकरण।''[8] ''UNDP की परिभाषा के अनुसार सुशासन के अनिवार्य तत्व अग्रलिखित है - भागीदारी, कानून का शासन, पारदर्शिता, संवेदनशीलता, सर्वसम्मति, समता, प्रभावीता व सक्षमता, उत्तरदायित्व, रणनीतिक दृष्टि आदि।''[9]

भारतीय परिप्रेक्ष्य में 'सर्वे भवंतु सुखिन', 'वसुधैव कुटुंबकम' तथा 'असतो मा सद्गमय' जैसे विचार सुशासन के बारे में अत्यंत प्राचीन कथन है। जिनके लिये आरंभिक समय से मध्यकाल तक सुशासन की स्थापना हेतु उपयोग किया गया। चोल साम्राज्य में स्थानीय स्वसरकार की प्रथा, लिच्छवी राजवंश के तहत गणतांत्रिक शासन की मौजूदगी, अलाउद्दीन खिलजी की बाजार नीति शासन के प्रति अकबर का धर्म निरपेक्ष नजरिया, ये सब भारत में सुशासन की परम्पराओं के कुछ उदाहरण है।

स्वतंत्रता पश्चात् सुशासन संबंधी धारणा भारतीय संविधान की प्रस्तावना में दिखाई देती है। जहां प्रस्तावना शासन के लिये एक दार्शनिक आधार प्रस्तुत करती है। जिसमें लोकतंत्र, न्याय, स्वतंत्रता, समानता गणतंत्र और बंधुत्व का भाव सुनिश्चित करने के लिये जनता को संप्रभु घोषित किया गया है। इतना ही नहीं अध्याय तीन में मौलिक अधिकार, अध्याय चार में राज्य के नीति निर्देशक तत्वों की चर्चा समाहित है जिसमें आर्थिक समाजवाद और सामाजिक न्याय के तत्वों को जगह दी गयी। इस प्रकार स्वतंत्रता उपरांत संविधान में सुशासन की अवधारणा को स्वाभाविकता एवं वैधानिकता के साथ समाहित किया गया।

जैसे-जैसे देश का विकास होता गया वैसे-वैसे प्रशासनिक और शासन में आयी जटिलताओं के परिणामस्वरूप सुशासन का अस्तित्व धूमिल होता गया और दिखाई देना लगा कि भारत में विधि का शासन स्थापित नहीं हो पाया हर जगह कानून का खुलेआम उल्लंघन होने लगा। यह बात गुन्नार मिर्डल ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'एशियन ड्रामा' में व्यक्त की है उनके अनुसार भारतीय राज्य इतना सॉट है कि कानून और शक्ति के बीच टकराव होने पर कानून की धज्जियाँ उड़ती हैं, प्रभावशाली व्यक्ति का बाल भी बांका नहीं होता। इस रिपोर्ट का निष्कर्ष यह था कि उच्च स्तरीय नौकरशाह, राजनेता, उद्योगपति एवं माफिया का गठबंधन हो गया। देश में कालाधन दावानल की तरह फैला हुआ हैं संविधान की अवहेलना हो रही है, स्वार्थसिद्धि हेतु तावड़तोड़ संशोधन किए जा रहे हैं। संस्थाओं का विघटन एवं मूल्यों का क्षय राष्ट्रीय संकट के मूल में है। संविधान द्वारा दिये अधिकार और संरक्षण बेमानी हो गये। राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र समाप्त होता नजर आने लगा, उनका वैचारिक आधार ही कहीं खो गया, परिणामस्वरूप सत्ता में बने रहने हेतु अवसरवादी दलों के रूप में उनकी पहचान सीमित होती नजर आने लगी। इन सारी विषम अराजक स्थितियों में आतंकवाद, हिंसा, शोषण, नक्सलवाद हत्या तोड़फोड़ सामान्य रूप से होते नजर आने लगे और भारतीय राज व्यवस्था तथा संसद पर प्रश्नचिह्न लगने लगे। तब प्रशासन शासन व्यवस्था में सुधार की प्रक्रिया की आवश्यकता को महसूस किया जाने लगा। इस हेतु ''1996 में सभी राज्यों के मुख्य सचिवों का 'प्रभावी और अनुक्रियाशील प्रशासन'

नामक विषय पर एक सम्मेलन हुआ तथा मई 1997 में सभी राज्यों के मुख्य मंत्रियों का सम्मेलन हुआ जिसमें यह तय किया गया कि (1) प्रशासनिक कार्यों में उपभोक्ता समूह और नागरिकों को शामिल किया जाए, (2) नागरिकों और पिछड़े समूहों को शक्ति सम्पन्न और संसूचित किया जाय, (3) स्वायत्त निर्वाचित स्थानीय निकायों के माध्यम से कार्यक्रम कार्यान्वयन और सेवा प्रदान करना सुनिश्चित किया जाये। इसके अलावा नागरिक घोषणा पत्र के माध्यम से एवं सूचना प्राप्ति के अधिकार के माध्यम से प्रशासन को सरल, संवेदनशील, जवाबदेह और पारदर्शी बनाने का प्रयास शुरू हुआ।''[10] सुशासन के आवश्यक तत्वों सहभागिता, पारदिर्शता, समता, सहनशीलता, सेवान्मुखता तथा विधि का शासन से ओत-प्रोत ऐसी संवेदनशील, प्रभावकारी और सक्षम प्रशासन व्यवस्था जिसमें सरकार अपने कार्यो के लिये आम जनता के प्रति उत्तरदायी हो तथा आम जनता की सहभागिता समानता के साथ हो, इस दिशा में प्रयास प्रारंभ हुये।

इन प्रयासों में केन्द्र और राज्य सरकारों ने कुछ कानून और व्यवस्थाओं को बनाया ताकि सुशासन स्थापित हो सके इन प्रमुख प्रयासों में सूचना का अधिकार, ई-प्रशासन, लोक सेवाओं में गारंटी, महिलाओं को आरक्षण, गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम, रोजगार हेतु अवसर/योजनायें, प्रशिक्षण विषय वस्तु में परिवर्तन, सूचना और सुविधा केन्द्रों की स्थापना, नागरिक चार्टर का आरंभ, लोक शिकायतों के संबंध में शीघ्र कार्यवाही का आश्वासन, अधिकारी वर्ग की निष्ठुरता और कार्य के प्रति अलगाव को दूर करने के लिये पदोन्नति संबंधित मूल्यांकन की नवीन पद्धति अपनायी गयी, सरकारी कार्यालयों का आधुनिकीकरण, अप्रचलित कानूनों को निरस्त करने हेतु 8 मई 1998 को गठित प्रशासनिक कानून समीक्षा आयोग द्वारा 2500 कानूनों में से 1382 को निरस्त करने की सिफारिश की गई, तथा जनता को विभिन्न सेवाएं 'एक ही खिड़की' से कम समय में उपलब्ध करवाने जैसे कार्य किये गये। परंतु इन प्रयासों के व्यवहारिक क्रियान्वयन में अनेकों समस्यायें सामने आयीं। ''प्रो. श्रीराम माहेश्वरी ने अपने लेख ''पोलिटिकल रिफार्म फॉर ट्रू गवर्नेस'' में वर्तमान राजनीति की कुछ समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित किया। उनके द्वारा बतायी गयी सद्शासन की स्थापना में आने वाली समस्यायें, राजनीतिक अस्थिरता, राजनीतिक दलों की क्रमबद्ध वृद्धि, राजनीति का अपराधीकरण, विधायिका में आपराधिक तत्वों की बढ़ती हुई संख्या आदि।..... संवैधानिक विशेषज्ञ सुभाष कश्यप के अनुसार सद्शासन की समस्यायें राजनीति में मूल्यों की गिरावट, राजनीतिज्ञ नौकरशाह व्यापारी वर्ग में आपराधिक सांठ-गांठ, संसद में राजनीतिज्ञों का गिरता स्तर, संसदीय प्रणाली की असफलता आदि इसके अतिरिक्त सामाजिक उथल-पुथल, राजनीतिक अस्थिरता, आर्थिक पिछड़ापन, पर्यावरणीय प्रदूषण, सामाजिक असमानता, मानव संसाधन विकास का अभाव, जनसंख्या की आधिक वृद्धि दर'' भी है।''[11]

वास्तव में भारत जैसे विशाल जनसंख्या और हर स्तर हर क्षेत्र में अनेकों विविधताओं वाले देश में एक अच्छी सरकार द्वारा जनता को सुशासन प्रदान करने के लिये सदैव सतत् प्रयत्नशील होना होगा। जिसके लिये सरल और स्पष्ट नियम, कार्य की निश्चित पद्धति, नैतिक मूल्य और सदाचार जैसे तत्वों को प्रशासनिक व्यवहार का अभिन्न अंग बनाना होगा तभी प्रशासन सफलता की ओर अग्रसर होगा। साथ ही सुशासन के मुख्य गुण जवाबदेही, पारदर्शिता, सक्षमता कुशलता, सशक्तिकरण, भागीदारी, समता और न्याय, संवेदनशीलता,

सर्वसम्मति, उत्तरदायित्वता आदि प्रभावी रूप से स्वतंत्रतोत्तर भारत के विकास में सहयोगी होंगे। इसके लिये ''देश में सांविधानिक तथा प्रशासनिक सुधार को प्राथमिकता प्रदान की जाये, न्यायपालिका को सद्‌शासन के हित में जवाबदेह बनाया जाये, विकेन्द्रीकरण, प्रत्यायोजन, लोकतांत्रिकरण, लोक संगठनों में पारदर्शिता आदि''[12] का व्यवहारिक रूप से क्रियान्वयन करना होगा। साथ ही वैश्वीकरण की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुये अपनी स्वायत्तता को बनाये रखते हुये जनहित में वृद्धि करने के लिये जनता की सहभागिता को भी बढ़ाना होगा। वास्तव में ''सुशासन के लक्ष्यों की उपलब्धि तभी हो सकती है जब व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका इस तरह से कार्य करे जो यह सुनिश्चित कर सके कि जनता अपने अधिकारों का उपभोग कर रही है, कर्त्तव्यों का अनुपालन कर रही है तथा अपने विवादों को वह संविधान व कानून के शासन के मापदण्डों के अनुरूप सुलझा रही है।''[13]

सत्य यह है कि स्वतंत्रता के बाद शासन प्रशासन में जो भी विकृतियां आयी और उनके समाधान हेतु विभिन्न उपायों के साथ सुशासन की अवधारणा को भी विकसित किया गया। जिसके सकारात्मक परिणाम विकास के रूप में हमारे समक्ष आये। अभी भी सुशासन के कई महत्वपूर्ण तत्वों को कागजी तौर पर अपनाया तो गया परंतु उसके वांछित परिणाम प्राप्त नहीं हो पा रहे यथा आरक्षण, सूचना का अधिकार, पारदर्शिता, ई-प्रशासन, जनता की सहभागिता, समता, न्याय आदि। सुशासन तभी व्यवहारिक रूप से सफल होगा जब नेतृत्व की दृढ़ इच्छा शक्ति, प्रशासन की कर्त्तव्यनिष्ठता और जनता की जागरूकता के साथ सक्रिय सहभागिता होगी।

संदर्भ -

1. दैनिक भास्कर - जगमोहन (जम्मू-कश्मीर के पूर्व राज्यपाल), 2 मई 2011, पृ. 8
2. एस. सी. सिंहल - लोक प्रशासन के प्रमुख विचार एवं मुद्दे - लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा 2009-10, पृ. 190
3. अवस्थी एवं अवस्थी - प्रशासनिक सिद्धांत, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, 2002, पृ. 53
4. एस. सी. सिंहल - पूर्ववर्णित, पृ. 191
5. एस. सी. सिंहल - पूर्ववर्णित, पृ. 191
6. हरीश कुमार खत्री - लोक प्रशासन - कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल 2013, पृ. 319-20
7. डॉ. बी. एल. फड़िया - लोक प्रशासन, साहित्य भववन पब्लिकेशन्स, आगरा 2009, पृ. 928
8. डॉ. वीरकेश्वर प्रसाद सिंह - लोक प्रशासन - ज्ञानदा प्रकाशन, दिल्ली, 2006, पृ. 683
9. डॉ. वीरकेश्वर प्रसाद सिंह - पूर्ववर्णित, पृ. 689-90
10. एस. सी. सिंहल - पूर्ववर्णित, पृ. 196
11. एस. सी. सिंहल - पूर्ववर्णित, पृ. 197-198
12. एस. सी. सिंहल - पूर्ववर्णित, पृ. 119
13. डॉ. वीरकेश्वर प्रसाद सिंह - पूर्ववर्णित, पृ. 691